SYLLABUS

Class – B.Com (Hons.) 5th Sem

Subject – Moral Values & Language

(PART-A) UNIT – I	नैतिक मूल्य – विश्व के प्रमुख धर्म एवं महत्वपूर्ण विशेषताएं 1. हिन्दू धर्म 2. जैन धर्म 3. बौद्ध धर्म 4. ईसाई धर्म 5. इस्लाम धर्म 6. सिक्ख धर्म
UNIT – II	हिन्दी भाषा – 1. पृथ्वी क्रोध में है (पर्यावरणीय निबंध) – प्रभाक श्रोत्रिय 2. मेरे सहयात्री (यात्रा वृत्तांत) – अमृतलाल बेगड़ 3. कक्षा और अध्यापक (लेख) – डॉ. विजयबहादुर सिंह 4. दूरदर्शन – अतीत और वर्तमान (संकलित) 5. लोकोक्तियॉं एवं मुहावरें (संकलित)
UNIT – III	हिन्दी भाषा – 1. जनसंचार के माध्यम (प्रिंट, इलेक्ट्रानिक एवं सोशल मीडिया) (संकलित) 2. पत्रकारिता के विविध आयाम (संकलित) 3. कम्प्युटर – हमारी जरूरत (संकलित) 4. राजभाषा हिन्दी (संकलित) 5. अनुवाद कला (संकलित)
(PART-B) UNIT – IV	**English Language –** 1. O Captain! My Captain : Walt Whitman 2. The Last Leaf : O Henry 3. The Axe : R.K. Narayan 4. Water : Dr. C.V. Raman
UNIT – V	**English Language –** Guided composition, Paragraph writing & Article writing on a given topic, Meaning & importance of translation **Basic language skills** : One word substitution, Homonyms, Homophone, words that confuse and punctuation marks.

renaissance

इकाई-1

भारतीय संस्कृति

संस्कृति एक पारिभाषिक शब्द है इसकी शब्दगत व्युत्पत्ति है सम्+कृ+क्तिन् संस्कृति। अर्थात् कृ धातु से क्तिन प्रत्यय और सम् उपसर्ग लगाने से 'संस्कृति' शब्द बनता है, जिसका अर्थ होता है– परिमार्जन अथवा परिष्कार।

परिभाषाएँ–

ह्वाइट के अनुसार– ''संस्कृति एक प्रतीकात्मक निरन्तर संचयी एव प्रगतिशील प्रक्रिया है।''

पं. जवाहर लाल नेहरू के अनुसार– ''संस्कृति का अर्थ मनुष्य का आन्तरिक विकास और उसकी नैतिक उन्नति है। पारस्परिक सद्व्यवहार है और एक–दूसरे को समझने की शक्ति है।''

भारतीय संस्कृति के भेद–

1. **आधिभौतिक संस्कृति**
2. **भौतिक संस्कृति**

भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ–

विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों मे से एक है– भारतीय संस्कृति । वैदिक साहित्य में भारतीय संस्कृति का व्यवस्थित रूप प्राप्त होता है । वेद विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ माने जाते हैं । **''सर्वे भवन्तु सुखिनः'' और ''वसुदैवस्य कुटुम्बकम''** की भावना से भारतीय संस्कृति आच्छादित रही है। योग, संयुक्त परिवार प्रणाली, आध्यात्म, गुरूओं का सम्मान, विश्व शांति जैसी सांस्कृतिक विशेषताएँ भारत को अन्य संस्कृतियों से पृथक कर श्रेष्ठ स्थान प्रदान करती है । भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार है :–

1. **प्राचीनतम संस्कृतियों मे से एक** :– भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषताएँ इसकी प्राचीनता है। हड़प्पाकालीन समय, वैदिक काल इस बात के प्रमाण है कि भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीनतम संस्कृति मे से एक है विश्व की संस्कृतियाँ जहाँ परिवर्तित होती रही। उनके उत्थान और पतन होते रहे किंतु भारतीय संस्कृति यथावत् है।
2. **स्थायित्व** :– भारतीय संस्कृति का प्रमुख गुण उसका स्थायित्व होना है। भारतीय संस्कृति में जो गुण, संस्कार, रीति–रिवाज प्राचीन समय से विद्यमान थे। वे यथावत् है अर्थात् संस्कारों की स्थायित्व भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता है।
3. **सहिष्णुता** :– सहिष्णुता भारतीय संस्कृति की विशेषता में सर्वप्रमुख है। भारत में विभिन्न धर्म, जाति, भाषा, रीति–रिवाज के लोग रहतें है। उन सबमे पृथकता होते हुए भी एकरूपता है। अनेक सांस्कृतिक आक्रमण का सामना करते हुए भी भारतीय संस्कृति ने आक्रमणकारी संस्कृतियों के गुणों को ग्रहण किया है।
4. **बहुकोणीय व्यवस्था** :– भारतीय संस्कृति बहुकोणीय व्यवस्था पर आधारित रही है । जो **वर्ण व्यवस्था,** श्रम विभाजन, पुरूषार्थ, आश्रम व्यवस्था जैसे जीवन के सभी पक्षों का प्रकटीकरण है। पुरूषार्थ के अंतर्गत **धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष** के सिद्धान्त दिए गए है । इसमें व्यक्ति तथा समाज की धार्मिक, आर्थिक, भावनात्मक तथा आध्यात्मिक समस्याओं और आदर्शो का निरूपण पाया जाता है। वही आश्रम व्यवस्था सुव्यवस्थित जीवन प्रणाली का आधार रही है।
5. **लचीलापन** :– भारतीय संस्कृति का प्रमुख गुण लचीलापन भी है। लचीलापन होने के कारण वह स्वयं को सुरक्षित बनाए हुए है। यह परिस्थितियों के अनुसार अपना रूप बदल लेती है। विभिन्न संस्कृतियों के मेल को भी इसने लचीलेपन के कारण आत्मसात् किया है।
6. **कर्म तथा पुनर्जन्म का सिद्धान्त** :– भारतीय संस्कृति कर्म और पुनर्जन्म के सिद्धान्तों पर आधारित है। इसके अनुसार मनुष्य के कर्म ही उसके अगले जन्म का निर्धारण करते है। अच्छे कर्म अच्छा परिणाम दे सकते है। यह विचारधारा मनुष्य को सदैव अच्छे कर्मो हेतु प्रेरित करती है।
7. **ऋण व्यवस्था** :– भारतीय संस्कृति ऋण व्यवस्था से जुड़ी है अर्थात् मानव जाति पितृऋण, देवऋण, ऋषिऋण, गुरूऋण, अतिथि ऋण इत्यादि से जुड़ा है। भारतीय संस्कृति का यह गुण मनुष्यों को उसकी कर्त्तव्यपरायणता से जोड़ता है।
8. **अनेकता में एकता** :– अनेकता में एकता, भारतीय संस्कृति का सर्वाधिक उल्लेखनीय गुण है। भारत में अनेक धर्मों, जातियों, रीति–रिवाजों, जनजातियों और भाषाओं के होते हुए भी यह एक राष्ट्र है।

भारतीय संस्कृति का प्रभाव स्पन्दन मात्र भारत भूमि तक ही सीमित नही वरन् इसने विष्व को मानवता की राह दिखाई है। भारतीय संस्कृति में निहित है :–

असतो मा सद्गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय
मृत्योर्मा अमृतं गमय

3. भारतीय समाज व्यवस्था–

आश्रम व्यवस्था

भारतीय समाज आश्रम व्यवस्था से जुड़ा था। सामान्यतः मनुष्य की आयु 100 वर्ष मानी जाती थी। 25–25 वर्ष की यह अवधि क्रमशः ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम एवं सन्यास आश्रम पर आधारित थी। ब्रह्मचर्य आश्रम में बालक आश्रम में रहकर शारीरिक, मानसिक, और मनौवैज्ञानिक शिक्षा गुरू से प्राप्त करता था। गृहस्थ आश्रम की अवस्था की अवस्था 26 से 50 वर्ष की होती थी इसमें व्यक्ति, विवाह एवं अजीविका से जुड़ता था। गृहस्थ कार्यों में प्रवीण होता था। तृतीय अवस्था वानप्रस्थ अवस्था होती थी । इसमें व्यक्ति भौतिक आवश्यकताओं से मुक्त होकर किसी एकान्त स्थान पर कठोर साधना में जुट जाता था। अंतिम अवस्था सन्यास अवस्था थी इसमें व्यक्ति जीवन में अंतिम 25 वर्ष में मृत्यु से पूर्व मनः स्थिति तैयार करता था एवं मोक्ष हेतु सन्यास ले लेता था।

वर्ण व्यवस्था

वैदिककालीन भारतीय समाज वर्ण और जातियों में बंटा हुआ था। पुरूषार्थ के आधार पर ये वर्ण –

1. ब्राह्मण,
2. क्षत्रिय
3. शुद्र
4. वैश्य थे।

बाद में वैश्यों को तृतीय क्रम पर व शुद्रों को चतुर्थ क्रम पर स्थापित किया गया। भारतीय समाज में ये वर्ण मानव की भौतिक बौद्धिक क्षमताओं व कर्म पर आधारित थे। ब्राह्मणों का कार्य पूजा–पाठ एवं कर्मकाण्ड था। क्षत्रियों का कार्य राजकार्य संचालित करना एवं सुरक्षा था। वैश्यों का कार्य व्यापार व्यवसाय संचालित करना था एवं शुद्रों का कार्य सेवा करना था।

सभ्यता और संस्कार

सभ्यता – सभ्यता बाह्य वस्तु है, जिसमें मनुष्य की भौतिक प्रगति में सहायक सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक और वैज्ञानिक उपलब्धियाँ सम्मिलित होती है। भौतिक संस्कृति को ही सभ्यता के नाम से जाना जाता है।

संस्कार

संस्कार का अर्थ परिष्कार एवं परिवर्तन है। भारतीय मनीषियों ने अपनी वैज्ञानिक सोच के आधार पर हमारी संस्कृति में सोलह संस्कार स्थापित किए ये संस्कार थे।

1. गर्भाधान
2. पुसंवन
3. सीमंतोन्नयन
4. जातकर्म
5. नामकरण
6. निष्क्रमण
7. अन्न प्राशन
8. चूड़ाकर्म या मुंडन या चूड़ाकरण
9. कर्णछेदन
10. यज्ञोपवीत या उपनयन
11. विद्यारम्भ
12. प्रत्यावर्तन
13. विवाह
14. सर्व संस्कार या वानप्रस्थ
15. संन्यास
16. अंत्येष्टि या अंतिम संस्कार

4. वैश्विक चेतना

वैश्विक चेतना : ज्ञान के धरातल पर सम्पूर्ण विश्व को एक सामान्य दशा में एक साथ लाने के उपक्रम को "**वैश्विक चेतना**" कहते हैं। वैश्विक चेतना का आधार वे मान्यताएँ होती हैं जो सार्वभौमिक एवं वैज्ञानिक तर्कों के जरिये ऐसी स्थापनाएँ प्रस्तुत करती हैं, जिन्हें सभी स्वीकार कर सकें । विगत कुछ दशकों से वर्तमान परिदृश्य में सांस्कृतिक बोध के नाम पर धार्मिक, राजनीतिक एवं आर्थिक जीवन पद्धतियों में बड़ी तीव्रता से परिवर्तन हुआ है । आठवें दशक के उत्तरार्द्ध से सम्पूर्ण विश्व में भूमण्डलीय संस्कृति के अस्तित्व में आने से एक नए प्रकार की स्वतंत्रता, समानता एवं जनतंत्रात्मक व्यवस्था ने जन्म लिया, जिसे **आर्थिक नव–उदारवाद** कहा गया। यह नव–उदारवाद पूँजीवाद एवं जनतंत्र, का मिला–जुला रूप था। भूमण्डलीय संस्कृति में विचार–सूचना, मूल्य और आधुनिक रूचियों का प्रवाह निरन्तर जारी है। आज सूचना एवं संचार क्रांति ने सम्पूर्ण विश्व को एक ग्लोबल विलेज में बदल दिया है।

वैश्विक चेतना का दार्शनिक आधार–

मानवीय चेतना की पहचान एक जटिल समस्या हैं दर्शन का आधार मूलतः मानवीय चेतना ही है । समसामयिक नई थ्योरी ;दर्शनद्ध में मनुष्य, चेतना, स्वचेतन, आत्मतत्व, निज, अस्मिता, अस्तित्व, अहम्, बुद्धि, आत्मा, चित्, निरपेक्ष तत्व आदि शब्दों का अब प्रयोग नहीं होता, क्योंकि ऐसा माना जा रहा है कि इन सभी शब्दों या पदबन्धों में कोई–न कोई पराभौतिक संकल्पनाएँ शामिल हैं । अर्थात् जब हम मनुष्य कहते हैं तो मनु अथवा आदम की संकल्पनाएँ उसके साथ जुड़ जाती हैं और व्यक्ति की सही पहचान धूमिल हो जाती हैं । नए दर्शन में मनुष्य की अवधारणा को सब्जेक्ट अथवा व्यक्ति के नाम से अभिहित किया जाता है । सब्जेक्ट या सब्जेक्टविटी शब्द में शुद्धता है एवं किसी प्रकार का मिश्रण नहीं है ।

मानवीय चेतना के सम्बन्ध में यह मान्यता थी कि विश्व के केन्द्र में कोई–न–कोई तत्व अस्तित्ववान है । उसे चाहे विश्वात्मा कह लें अथवा नियामक तत्व नव जागरण काल में देकार्त ने मानव चेतना को ही केन्द्र में स्वीकार किया । कांट और हीगेल जैसे दार्शनिकों ने इस अवधारणा को आगे बढ़ाया । सोलहवीं–सत्रहवीं शताब्दी में देकार्त ने यह घोषणा की कि – I think therefore I am किन्तु आधुनिक दर्शन ने इस सिद्धान्त को उलट दिया । कहने का आशय नई वैश्विक चेतना में सबसे अधिक मनुष्य का अपकेन्द्रण हुआ है ।

वैश्विक चेतना का उद्देश्य –

मीडिया, सूचना तंत्र, कम्प्यूटर नेटवर्किंग, इंटरनेट एवं जन संचार क्रान्ति ने विश्व की एक नई परिकल्पना प्रस्तुत की है । अमेरिका जहाँ मीडिया या संचार को एक क्राफ्ट ;व्यावसायिक पाठ्यक्रमद्ध के रूप में वरीयता देता है वहीं इंग्लैण्ड की स्पष्ट मान्यता है कि इसके अंतर्गत अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र एवं भूगर्भशास्त्र इत्यादि को भी शामिल किया जाए । यूरोप के अधिकांश देशों में मीडिया का समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र व मीडिया का मनोविज्ञान जैसे अन्तरविषयक पाठ्यक्रमों का प्रचलन बढ़ता जा रहा है।

भारत में संचार शिक्षा का आरम्भ प्रो. पृथ्वीपाल सिंह ने किया। भारत में जनसंचार शिक्षा का विकास अमेरिका की तर्ज पर ही अधिक हुआ है।

मीडिया अथवा संचार के कारण समाज का परम्परागत स्वरूप बदल गया है। परिवार, विवाह, धर्म, ने नए रूप ले लिए हैं। जनसंचार पहले जहाँ समाज और राष्ट्र तक सीमित था, अब उसका क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय हो गया है। उसमें बहुसामाजिकता, बहुराष्ट्रीय, बहुधार्मिकता और बहुराजनीतिक दृष्टिकोण शामिल हो गए है। जनसंचार माध्यमों ने एक किस्म की जीवन–शैली विकसित कर ली है जिसमें वर्ग, जाति, भाषा, धर्म के आधार पर समाज के विभेदीकरण की स्थिति नहीं रह गयी है। विश्व का हर व्यक्ति सूचना पाने का अधिकारी है। मीडिया का यह सकारात्मक पक्ष निःसन्देह सामाजिक एवं मानवीय हित से जुड़ा हुआ है।

रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में संचार संसाधनों ने अभूतपूर्व सफलता हासिल की है। आवश्यकता इस बात की है कि यह शिक्षा, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन शैली के विविध मापदण्डों का निर्धारण कैसे करेगा, यह स्पष्ट नहीं है। कोई भी जन माध्यम समाजिक सरोकारों से अलग नहीं हो सकता। पाठ्यक्रम को किस तरह वर्तमान की आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तित और परिवर्द्धित करें। जनसंचार के अध्ययन के लिए केवल संचार के सिद्धान्तों का पठन–पाठन पर्याप्त नहीं है। इसके लिए सूचना क्रान्ति के फलस्वरूप आये नए तकनीकी उपकरणों के उपयोग की क्षमता को भी विकसित करना जरूरी है। इसके अलावा भाषा और समाज विज्ञान के क्षेत्र में जो व्यावहारिक परिवर्तन आये हैं, उनका अनुसंधान करना भी आवश्यक है, क्योंकि वर्तमान समाज में संचार के लिए बदली हुई भाषा और बदले हुए सामाजिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखना ही इसके स्पष्ट उद्देश्यों को निर्धारित करेगा।

वैश्विक चेतना बनाम तकनीकी क्रांति –

पश्चिम के सुप्रसिद्ध विचारक **एलैल** ने अपनी महत्वपूर्ण कृति **'द टेक्नोलाजीकल सोसाइटी'** में तकनीक और मशीन में अंतर किया है। **एलैल** के अनुसार – **"तकनीक हमारे युग का चेहरा है। यह बीमार चेहरा है। यही बीमार चेहरा**

आज का नायक है। मनुष्य के निर्णयों का नायक मनुष्य नहीं है बल्कि तकनीक है।'' सामाजिक जीवन में तकनीक का निर्णायक असर स्तरीकरण में देखा जा सकता है। स्तरीयकरण का अर्थ है – किसी संगठन या प्रक्रिया की तमाम समस्याओं को शुरू करने से पहले ही हल कर लेना। **ममफोर्ड** इसे उत्पादों का स्तरीकरण कहते हैं। एलैल के अनुसार आधुनिक तकनीक की पाँच बुनियादी विशेषताएँ हैं –

क. स्वगतिमयता, ख. स्व–विस्तार ग. एक–केन्द्रता, घ. सार्वभौमिकता तथा ड़ स्वायत्तता।

वर्तमान तकनीकी क्रांति की ये पाँचों विशेषताएँ ऐसे आधार बिन्दु हैं जिनके माध्यम से हम वैश्विक चेतना को स्पष्ट कर सकते हैं। हमारे पारिवारिक/सामाजिक जीवन से लेकर राष्ट्रीय/ अन्तर्राष्ट्रीय जीवन तक हर जगह तकनीक अपनी उपस्थिति का अहसास कराती है। सरकारी गैर सरकारी योजनाएँ, शासन तंत्र, व्यापार, व्यवसाय सबमें तकनीक की भूमिका दिखाई देती है। तकनीकी क्रान्ति ने तथाकथित आधुनिकता को पीछे छोड़ दिया है। यह उत्तर आधुनिकता का समय है। सम्पूर्ण विश्व में इस पर बहसें जारी हैं। कुछ विद्धानों का मत है कि वैज्ञानिक उन्नति से मानवीय उत्कर्ष का सपना पूरा नहीं हुआ, प्रौद्योगिक एवं तकनीकी परिवर्तनों से समाज देखते–ही–देखते मीडिया समाज या तमाशा सोसाइटी (Spectacle Society) में परिवतर्तित हो गया। नई व्यावसायिक कार्य पद्धतियों ने उपभोक्तावाद के ऐसे रूपों को उत्पन्न कर दिया जिनकी कल्पना भी पहले नहीं की जा सकती थी। इसी प्रकार कम्प्यूटर दिमाग ने ज्ञान के स्वरूप एवं आवश्यकता को बदलकर रख दिया। अब ज्ञान प्राप्ति की पुरानी मान्यताएँ बेदखल हो चुकी है। वैश्विक धरातल पर इस प्रकार के सांस्कृतिक वातावरण को उत्तर आधुनिकतावाद के नाम से जाना जा रहा है।

5. समन्वयीकरण (भारतीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में)

भारतीय संस्कृति

भारत की अजर–अमर संस्कृति का संबंध शिष्टाचार और मस्तिष्क के प्रशिक्षण से है। संस्कृति उन सूक्ष्म तत्वों से संपर्क रखती है, जिसे विचार, विश्वास, रूचि, कला एवं आदर्श के रूप में देख सकते है। भारतीय संस्कृति भावात्मक एकता का आधार है। भारतीय संस्कृति की कहानी एकता, समन्वय, समाधानों एवं प्राचीन परम्पराओं के पूर्ण संयोग की उन्नति की कहानी है रामधारी सिंह 'दिनकर' के शब्दों संस्कृति ने अनेक संस्कृतियों को लेकर अपनी ताकत बढ़ाई है'' भारतीय संस्कृति मानव के मानवीय एवं आध्यात्मिक विकास की अभिव्यक्ति है। संस्कृति मन और आत्मा की आंतरिक अवस्था है। मानव को संस्कृति का निर्माता कहा जाता है। मानव की सबसे बड़ी संपत्ति उसकी संस्कृति ही है। संस्कृति का मुख्य उद्देश्य शारीरिक, मानसिक व आत्मिक शक्तियों का विकास करना है। संस्कृति मनुष्यता को जन्म देकर मनुष्य के स्वरूप का निर्माण करती हैं कला, साहित्य, धर्म, दर्शन, राजनीति, विज्ञान सभी संस्कति के अंग है और यही मानव सृजनता के विविध रूप भी है। भाषा, संगीत, नृत्य रंगरूप उसके विविध माध्यम है। भारतीय संस्कृति में सभी धर्मो के प्रति आदर और सहिष्णुता की भावना विद्यमान है। स्मिथ के अनुसार ''भारत में रक्त, रंग, भाषा, वेशभूषा, रीतिरिवाज की अखंख्य विविधतायें होते हुए भी आधारभूत एकता पायी जाती है।'' भारतीय संस्कृति मानव के मानवीय एवं आध्यात्मिक विकास की अभिव्यक्ति है। इन सभी विशेषताओं के कारण संस्कृति को श्रेष्ठ संस्कृति माना गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय एवं समन्वीकरण के संदर्भ

भारत औद्योगिक क्षेत्र में विश्व में अग्रणी स्थान रखता है। मानव जहाँ एक ओर सामाजिक प्राणी है, वहीं दूसरी ओर वह उद्योग प्रधान प्राणी भी है। मानव के व्यक्तित्व विकास के लिए उसे सक्रिय उद्योगशील होना अनिवार्य है। औद्योगिक व्यवस्था के आधार स्तंभ भूमि, श्रम, पूंजी, संगठन और विशेषीकरण, आधुनिक उद्योगों में महती भूमिका निभाते हैं। उद्योग के समुचित संगठन से उत्पादन क्षमता की वृद्धि हाती है। आज मशीनी युग अपने साथ उपरिमित शक्ति एवं साधन लेकर आया है। औद्योगिक क्रांति के युग में कुटीर उद्योगों का अंत हो गया। गांधीजी के विचार से बड़े पैमाने के उद्योगों को विशेष प्रोत्साहन देकर विशालकाय मशीनों के उपयोग को रोका जाये तथा छोटे उद्योगों द्वारा पर्याप्त मात्रा में आवश्यक वस्तुएँ उत्पादित की जायें। औद्योगिक विकास की योजनाओं में कुटीर उद्योगों और बड़े उद्योगों के बीच एक समझौता हो जाये और वर्तमान शिक्षा प्रणाली औद्यागिक शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन हो। भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर 1939 में दूसरा विश्वयुद्ध आरंभ होने तक औद्यागिक विकास हुआ। वास्तव में द्वितीय पंचवर्षीय योजना एक महत्वाकांक्षी योजना थी जिसका प्रमुख उद्देश्य देश का औद्योगिक विकास करना था। इसके फलस्वरूप इस योजना काल में भिलाई, दुर्गापुर, रांची जैसे इस्पात के बड़े–बड़े कारखाने स्थापित किये गये इसके बाद प्रत्येक आगामी पंचवर्षीय योजनाओं में सार्वजनिक क्षेत्र के अंतर्गत उद्योगों का विकास को प्रोत्साहन मिला। अतः भारत में औद्योगिक विकास ने एक नई सामाजिक तथा राजनैतिक चेतना को जन्म दिया।

साहित्य मानव और समाज

साहित्य संस्कृति की देन है। सद्वृतियाँ ही जीवन को मंगलमय बनाती हैं और साहित्य का कार्य इन सद्वृत्तियों को जगाना होता है। साहित्य मानव समाज का मस्तिष्क है। साहित्य की सफलता इसी में है कि वह समाज के लिए उपयोगी हो।

साहित्य से ही समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए है। जैसे भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्रा कुमारी चौहान की रचनाओं ने जनता को बहुत प्रेरणा दी। कबीर की रचनाओं ने धार्मिक क्षेत्र में फैली अन्धविश्वास पूर्ण भावनाओं को समाप्त किया। तुलसी की 'रामचरितमानस' से जनता आज तक प्रेरणा ले रही है। इस प्रकार साहित्य अतीत का गौरव याद दिलाने के रूप में उपयोगी है।

धर्म तथा मानव जीवन

धर्म मस्तिष्क की चिंताओं का हल है। धर्म जीवन की निश्चितता लाता है, धर्म सामाजिक व्यवहारों पर नियंत्रण रखता है। धर्म सामाजिक आदर्शो व प्रथाओं का संरक्षण प्रदान करता है। धर्म सम्यता का पथ हैं धर्म विश्व में शांति के कारणों की सहायता करता है और धर्म मानव में मानवीयता का संस्थापक है। धर्म में मानवीय कार्यो को निर्देशित व नियंत्रित करने की क्षमता है। धर्म सामाजिक नियंत्रण का एक प्रमुख साधन है। धर्म दो तत्वों पर आधारित है। यह मनुष्य मनुष्यों के बीच संबंधो पर जोर देता है।

कुटीर उद्योग

सामान्यतः कुटीर उद्योगों से आशय छोटे स्तर के ऐसे उद्योगों से है, जो बहुत कम पूँजी से तथा बहुत स्थान पर जैसे कि घरों में संचालित किये जाते हैं। ऐसे उद्यागों का सामान्यतः परिवार के सदस्य ही संचालित करते है यदि जरूरत पड़े तो एक–दो व्यक्ति बाहर के भी लगाये जाते है। कुटीर उद्योगों के अन्तर्गत छोटे स्तर की वस्तुएँ ही बनाई जा सकती हे और वह भी सीमित मात्रा में । जैसे–घरों में अगरबत्ती बनाना, झाड़ू व चटाई बनाना आदि।

भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहे जाने कुटीर उद्योग आज समाप्त हो रहे है। स्वतंत्रता पूर्व अंग्रेजों का उद्देश्य अपने यहाँ बने उद्योगों का माल भारत में खपाना था, तो आज के युग में कम समय में ज्यादा मुनाफा कमाना हमारे उद्योगपतियों का उद्देश्य है। इसके साथ ही हमारी शिक्षा प्रणाली में हमें उद्योगो की शिक्षा न देकर केवल आधनिक औद्योगिक प्रणाली तथा प्रौद्योगिकी की शिक्षा देते हैं। पूँजी का आभाव और बड़े उद्योगों से प्रतियोगिता के चलते भारत में कुटीर उद्योग पिछड़ी अवस्था में है।

मानव और संस्कृति में अन्तर्सम्बन्ध है

मानव और संस्कृति में गहर संबंध है। संस्कृति का मुख्य उद्देश्य मानव की शारीरिक मानसिक तथा आत्मिक शक्तियों का विकास करना है। कला, साहित्य, धर्म, दर्शन, राजनीति, विज्ञान सभी संस्कृति के अंग है और यही मानव सृजन के विविध रूप हैं।

इकाई–2

1. **धर्म**

धर्म की अवधारणाः

प्राचीन काल से ही मनुष्य के भीतर प्राकृतिक घटनाओं एवं लोकोत्तर शक्तियों के प्रति विश्वास की प्रवृत्तियाँ रही है। यह विश्वास कभी भय, कभी आस्था तो कभी समर्पण के रूम में मानव द्वारा स्वीकृत होता रहा है। मानवीय शक्ति से श्रेष्ठ विश्व बन्धुत्व का भाव और सबसे श्रेष्ठ ईश्वर को माना जाता रहा है। धर्म की शरूवात मनुष्य से होती है और उसकी परिणति ईश्वर में। मनुष्य और ईश्वर के बीच सेतु का कार्य धर्म ही करता है। इस प्रकार धर्म मनुष्य द्वारा ईश्वर तक पहुँचने का एक माध्यम है।

भारतीय चिन्तन में धर्म के दो कार्य बताये गए है– 'कर्म' और अध्यात्म'। कर्म का सम्बन्ध संसार से है और अध्यात्म का ईश्वरीय चेतना से।

भारत को सभी धर्मों की शरण स्थली माना जाता है। विश्व के सभी धर्म अपनी विशेषताओं, उपासना, पद्वातियों, दार्शनिक मान्यताओं एवं मतों संप्रदायों के साथ भारत में निवास करते है। यहाँ एक धर्म को वरीयता न देकर सभी धर्मो के प्रति सहिष्णुता का भाव रखा जाता है।

भारत में निम्नलिखित धर्मों/धार्मिक मान्यताओं एवं अनुयायियों का उल्लेख किया जाता है।

1. हिन्दू धर्म
2. बौद्ध धर्म
3. जैन धर्म
4. सिक्ख धर्म
5. इस्लाम धर्म
6. ईसाई धर्म
7. पारसी धर्म
8. यहूदी धर्म

1. **हिन्दू धर्म**– हिन्दू धर्म को सनातन धर्म अथवा वैदिक धर्म के नाम से भी जाना जाता है। हिन्दू धर्म किसी एक प्रवर्तक या धर्मग्रंथ के नाम के नाम पर विकसित न होकर बहुआयामी एवं अनेक पद्वतियों से परिपूर्ण है। कर्म का सिद्वांत, पुनर्जन्म, मोक्ष भक्ति, समर्पण, शुद्वता जीव–जगत्, आत्मा ईश्वर के वास्तविक रूप को जानने की उत्कट अभिलाषा, साधना, व्रत, तीर्थ, मंदिर, मूर्तिपूजा, सहिष्णुता, उदारता, पर दुःख कातरता, करूणा, सत्य, अहिंसा, परोपकार, आस्था–विश्वास आदि हिन्दू धर्म के आधारभूत स्तंभ है।

   उत्तर वैदिक काल में प्राकृतिक देवताओं की जगह ब्रह्मा–विष्णु–महेश जैसी त्रिमूर्तियों तथा शक्ति, गणेश एवं अंशावतारों की वृहद कल्पना की गई, जिसके फलस्वरूप अवतारवाद की धारणा ने जन्म लिया। मध्यकाल अनेक धार्मिक प्रवृत्तियों, संप्रदायों पंथो एवं साधना पद्धतियों के लिए महत्वपूर्ण है। फारसी, बौद्ध आदि धार्मिक दार्शनिक मान्यताओं से अनुप्रमाणित हिन्दू धर्म में अनेक नए विचारों एवं जीवन–आदर्शो का सम्मिश्रण हुआ।

   आधुनिक काल में 'हिन्दू धर्म' को पुनर्जागरण से जोड़ते हुए उसकी नवीन व्याख्याएँ की गई। ब्रह्म समाज, आर्य समाज, थियोसॉफिकल सोसायटी, जैसी संस्थाओं द्वारा हिन्दू समाज में व्याप्त अन्धरूढ़ियों, अंधविश्वासों पर कड़े प्रहार किये गए।

2. **बौद्ध धर्म**– इस धर्म के संस्थापक महात्मा बुद्ध है। महात्मा बुद्ध ने चार आर्य सत्य माने है जिन्हें क्रमंशः दुःख सम्बन्ध, दुःख निवृत्ति के उपाय कहा जाता है। बौद्ध धर्म में दुःख निवृत्ति के आठ उपाय बताये गए हैं, जिन्हें **'आष्टांगिक मार्ग'** कहते हैं– सम्यक् दृष्टि सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्म, सम्यक् आजीव, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति और सम्यक् समाधि। इस धर्म में 'सम्यक्' शब्द संतुलन या मध्य मार्ग का प्रतीक है। बौद्ध धर्म की मान्यता है कि बहुत जानना या बिल्कुल ही न जानना, बहुत प्रसन्नता या बहुत दुःख ये दोनों अतिवादी छोर हैं। दोनों के बीच का रास्ता ही संतुलन या मध्यम मार्ग है।

   बौद्ध धर्म को हिन्दु धर्म का ही सुधारवादी आंदोलन कहा जाता है।

   मौर्य सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म का प्रचार भारत के अलावा श्रीलंका तक किया था। बौद्ध धर्म का सम्पूर्ण साहित्य विनय पिटक, सूत पिटक, अभिधम्म पिटक में संगृहीत है। आगे चलकर महायान और हीनयान नामक दो संप्रदाय भी बन गए। बौद्ध धर्म का प्रभाव भारत, चीन, जापान, तिब्बत आदि देशों पर ज्यादा पड़ा।

3. **जैन धर्म**– जैन धर्म को भी हिन्दू धर्म की एक विकासवादी अवस्था की शाखा माना जाता है। जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर स्वामी को माना जाता है। जैन धर्म की दो शाखाएँ है पहली श्वेताम्बर और दूसरी दिगम्बर। श्वेताम्बर यानी वे जैन भिक्षु जो श्वेत वस्त्र धारण करते है और दिगम्बर उन्हें कहा जाता है जो आकाश को ही अपना वस्त्र मानते है। जैन धर्म के संस्थापक महावीर स्वामी का जन्म ईसा से 600 वर्ष पूर्व बिहार के कुण्डग्राम में हुआ था। बचपन में ये वर्धमान के नाम से जाने जाते थे 30 वर्ष की अवस्था में राजपाट छोड़कर इन्होनें लगातार 12 वर्षों तक घोर तपस्या की। अत्यधिक पराक्रमी होने के कारण इन्हें 'महावीर' की संज्ञा प्राप्त हुई। 72 वर्ष की आयु में पावा नामक स्थान पर इनका देहावसान हुआ। जैन धर्म में पाँच महाव्रतों–सत्य, अंहिसा, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य को माना जाता है तपस्या जैन धर्म का मूल आधार है। जैन धर्म के प्रथम संस्थापक ऋषभदेव को माना जाता है इस धर्म के 23वें तीर्थकर पार्श्वनाथ थे। पार्श्वनाथ का जन्म महावीर स्वामी से 250 वर्षो पूर्व हुआ था। पार्श्वनाथ ने चार ही व्रत माना था। महावीर स्वामी ने पाँचवें 'ब्रह्मचर्य को शामिल किया।
4. **सिक्ख धर्म**– 'सिक्ख' शब्द शिष्य का अपभ्रंश है। गुरू के प्रति शिष्य का आदर एवं समर्पण भाव ही सिंक्ख धर्म की बुनियाद है। सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरू नानकदेव ;1469–1538द्ध थे। वे मानवता, विश्वबन्धुत्व, सहिष्णुता एवं दयाभाव में विश्वास करते थे।

''सबमें उसका नूर समाया, कौन है अपना कौन पराया''

सिक्ख धर्म के पहले गुरू नानक देव और अंतिम 10 वें गुरू गोविन्द सिंह के अलावा आठ अन्य गुरू थें जिनमें कुछ प्रमुख निम्न हैं–

1. गुरू अंगद गुरूमुखी लिपि के जनक।
2. अमरदास सती प्रथा, पर्दाप्रथा के विरोधी।
3. रामदास अमृतसर की स्थापना की।
4. अर्जुनदेव गुरू ग्रंथ साहब का संकलन एवं मंदिर की नींव रखी।
5. तेगबहादुर इस्लाम धर्म स्वीकार न करने पर इन्हें फाँसी पर चढ़ा दिया गया। वहाँ का गुरूद्वारा शीशगंज आज भी प्रसिद्ध है, जो दिल्ली के चाँदनी चौक में स्थित है।
6. गुरू गोविन्द सिंह खालसा सेना के संस्थापक। सिक्ख धर्म के अनुयायियों के लिए पाँच चीजें–केश, कंघा, कृपाण, कच्छा व कड़ा अनिवार्य है।

5. **इस्लाम धर्म**– इस्लाम धर्म की शुरूआत सातवीं शताब्दी में अरब देश में हुई। इसके प्रवर्तक हजरत मोहम्मद साहब थे। मोहम्मद साहब के जन्म के पूर्व अरब देश में अरबी धर्म प्रचलित था जिसमें बहु देव पूजा का प्रचलन था। प्राचीन अरबी धार्मिकता बर्बता के चरमोत्कर्ष पर थी। गुफा में 15 वर्षो तक तपस्या करने पर उन्हें अल्लाह का आदर्श प्राप्त हुआ और उन्होने धार्मिक सुधार किया। अरब में उनका भयंकर विरोध शुरू हुआ। फलस्वरूप मोहम्मद साहब को मक्का छोड़कर मदीना जाना पड़ा यह घटना 24 सितम्बर 662 ई. है। अतः इसी दिन से मुसलमानों का हिज़री संवत प्रारंभ होता है। इस्लाम धर्म में एक ही ईश्वर पर बल किया जाता है। यह समानता एवं भाईचारे के सिद्धान्त पर आधारित है। इस्लाम धर्म के दो प्रमुख संप्रदाय है– शिया और सुन्नी। इस्लाम धर्म में अत्यधिक उदारवादी एवं प्रेम से परिपूर्ण एक नये संप्रदाय का जन्म नवीं शताब्दी के आसपास हुआ, जिसे सूफी धर्म कहा गया। 'सूफी' शब्द का अर्थ होता पवित्र। शारीरिक पवित्रता से ज्यादा महत्वपूर्ण है मन की पवित्रता। मन में अगर प्रेम, दया, सौहार्द्र एवं भरोसा है तो सारे धर्म अपने हैं। सूफी इस्लामी शरीयत कर्मकाण्ड का विरोध करते थे। सूफियों में ख्वाजा अब्दुल चिश्ती, शेख इस्माइल, निजामुद्दीन औलिया, आदि के नाम बड़े आदर से लिये जाते है। इनकी दरगाहों में आज भी हिन्दू मुसलमान मत्था टेकते है और दुआएँ माँगते है।
6. **ईसाई धर्म**– पहली शताब्दी में सेंट थामस प्रथम की भारत–यात्रा से ही ईसाई धर्म का पवित्र ग्रंथ, बाईबिल के दो भाग है– 1 ओल्ड टेसटामेंट 2. न्यू टेस्टामेंट । पुरानी बाइबिल को यहूदी धर्म भी कहा जाता है और इसके लेखन हजरत दाऊद तथा हजरत मूसा को माना जाता है। न्यू टेस्टामेंट में ईसामसीह के उपदेशों का संग्रह है। व्यक्ति–स्वतंत्र्य मानवतावाद, भाई–चारा, तार्किकता एवं विचारों की मुक्तता ईसाई धर्म के मुख्य उपादान है।
ईसाई धर्म में इस्लाम एवं बौद्ध धर्म की बहुत सी बातों का समावेश हुआ है।
ईसाई धर्म में प्रेटिस्टेंट संप्रदाय का आरंभ सुधारवादी आंदोलन कर्ता मार्टिन लूथर द्वारा किया गया। प्रेटिस्टेंट मतावलंबी पोप, चर्च और मूर्ति पूजा का विरोध करते हैं
7. **पारसी धर्म**– सन् 630 ई. इराक के मुसलमानों ने ईरान पर हमला करके उन्हें हरा दिया। इसके पूर्व ईरानी लोग जिस धर्म का पालन करते थे उसे पारसी धर्म में अग्नि को सर्वस्व माना जाता है। शुद्धता, पवित्रता संस्कारों एवं प्रवृत्तियों के शुद्ध सत्वरूप में अग्नि की उपासना पारसी धर्म का मूल आधार है। पारसी धर्म में प्रकृति पूजा को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, अग्नि, वायु, आदि की पूजा ईश्वर के रूप में की जाती है। पारसी धर्म के संस्थापक जोरो एस्टर जरथुस्त्र को माना जाता है। इनका एकमात्र पवित्र धर्म ग्रंथ जेद अवेस्ता है।
पारसियों को जोरो एस्ट्रिन कहा जाता है इस धर्म में अनेक देवी–देवताओं को माना जाता है।

पारसी धर्म में मृतक का अंतिम संस्कार जलाकर, दफनाकर या जल में प्रवाहित कर नहीं किया जाता है। शव को यूँ ही छोड़ दिया जाता है ताकि चील, कौए, गिद्ध इत्यादि मांस भंक्षण कर सकें। मांस भक्षी पक्षी निर्द्वन्द भाव से शव के भीतर मांस के टुकड़े खाकर तृप्त हो सकें।

8. **यहूदी धर्म**– अब्राहम के पुत्र ईसाक और जैकॉब के साथ ईश्वर ने धर्म का नवीनीकरण किया। जैकॉब इजराइल के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा इसकी संताने इजराइली कहलाई।
यहूदी धर्म विश्व का एक प्राचीन धर्म है। ईसाई धर्म भी यहूदी धर्म का परिष्कृत रूप माना जाता है। यहूदी धर्म में स्वतंत्रता, मानतावाद, समानता और भाई–चारे की भावना, तार्किकता आदि के विरोध का ध्यान रखा जाता है।
पुरानी बाइबिल यहूदी धर्म के पैगम्बर हजरत दाऊद तथा हजरत मूसा द्वारा लिखी गई है। इस धर्म के आधारभूत नियम एवं शिक्षाएँ मूल बाईबिल जिसे हिब्रू कहते है कि प्रथम पाँच पुस्तको (जो तोराह कहलाती है) यहूदी धर्म का इतिहास 'तलमुद' में मिलता है। इसी में यहूदियों के लोकजीवन एवं इतिहास का संकलन हुआ।

न्याय

प्राचीन भारत में न्याय प्रणाली के पृथक–पृथक रूप देखने को मिलने है। प्राचीन समय में यह 'क्षतिपूर्ति' नाम से प्रचलित थी। इनमें अपराधी पर स्वर्णमुद्राओं के दण्ड का प्रावधान था।
उत्तर वैदिक काल में मध्यमसी' शब्द न्यायप्रणाली से जुड़ा था। उसका अर्थ था समझौता कराने वाला। ई. पूर्व दूसरी–तीसरी शताब्दी में नयायप्रणाली को धर्मशास्त्र से जोड़ा गया था। इसमें अपराधी को मूसल लेकर राजदरबार में उपस्थित होना पड़ता था। यदि मूसल से उसी समय अपराधी को टूकड़े कर दिए जाते थें, तो मान्यता थी कि चोर स्वर्ग जाने का अधिकारी हो गया। न्याय व्यवस्था राजा के हाथ में विद्यमान थी।

2. दर्शन

प्रत्येक धर्म का पूर्वाद्ध भाग व्यावहारिक या कर्मकाण्ड प्रधान होता है तथा उत्तरार्द्ध चिन्तन प्रधान अथवा आध्यात्मिक दर्शन का संबंध धर्म के उत्तरार्द्ध से है।
वैदिक धर्म का प्रारंभिक अंश पूर्व मीमांसा कहलाता है। मीमांसा का अर्थ होता है तर्को एवं युक्तियों द्वारा किसी विषय की समस्या का निराकरण। मीमांसा दर्शन के जनक जैमिनि को माना जाता है। उत्तर मीमासां या वेदान्तदर्शन का सूत्रपात बादरायण के 'वेदान्तसूत्र' अथवा 'ब्रहमसूत्र' से माना जाता है। वेदान्त दर्शन पूर्णतः उपनिषदों पर आधारित है?

आस्तिक दर्शन–
आस्तिक का अर्थ होता है आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करना।
अस्तिक दर्शन में अनेक सुधार एवं परिवर्तन करने पश्चात् निम्नलिखित रूपों में उसका उल्लेख किया जाता है। इन्हें षड्दर्शन के नाम से जाना जाता है।

1. न्याय 2. वैशेषिक 3. सांख्य 4. उपनम, 5. निगमन

1. न्याय दर्शन– इस दर्शन के प्रवर्तक महर्षि गौतम को माना जाता है। महर्षि गौतम ने न्याय के पॉच अंग बताये है 1. प्रतिज्ञा 2. उदाहरण, 3. हेतु, 4. उपनम, 5. निगमन
2. वैशेषिक दर्शन – वैशेषिक दर्शन के प्रणेता महर्षि कणाद कहे जाते है। इनके अनुसार संसार की रचना अदृश्य अणु–शक्ति द्वारा हुई है।
3. सांख्यदर्शन– सांख्य के संस्थापक महर्षि कपिल को कहा जाता है। महर्षि कपिल के अनुसार प्रवृति अथवा आत्मा अमर एवं अनादि है। उसे जानने के बाद ही जीवन संसार के दुःखों से मुक्ति पा सकता है।
4. योग दर्शन– योग दर्शन के प्रवर्तक महर्षि पंतजलि है। इन्होंने आत्म–ज्ञान की आठ विभूतियों का उल्लेख किया है जिन्हें यम, नियम आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि के नाम से जाना जाता है।
5. मीमांसा दर्शन– इस दर्शन के प्रवर्तक महर्षि जैमिनि को माना जाता है। इस दर्शन में यज्ञ को सर्वोपरि माना गया है।
6. वेदान्त दर्शन– वेद के अंतिम भाग को वेदान्त कहते है। वेदान्त उपनिषदों का आशय भी लिया जाता है।

इन छः दर्शनों के अलावा आस्तिक दर्शन के अन्तर्गत द्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद, अद्वैतवाद, एवं विशिष्टा द्वैतवाद का उल्लेख भी किया जाता है।
नास्तिक दर्शन– आस्तिक दर्शन के अन्तर्गत षट्दर्शन की तरह ही नास्तिक दर्शन के भी छः रूप हैं–

1. चार्वाक का लोकायतदर्शन
2. महात्मा बुद्ध का माध्यमिक दर्शन
3. जैन दर्शन
4. योगाचार दर्शन
5. सौत्रन्तिक दर्शन
6. वैभाषिक दर्शन

आस्तिक दर्शन– 'लोकायत' का अर्थ होता है लोक अर्थात संसार को ही सब कुछ मानना। 'संसार' क अलावा आत्मा, ईश्वर इत्यादि की सत्ता कुछ नहीं है जो कुछ है, यह संसार है।

माध्यमिक दर्शन– इस दर्शन के संस्थापक महात्मा बुद्ध को माना जाता है। उनके उपदेशों का संग्रह त्रिपिटक' कहलाता है।

जैन दर्शन– जैन दर्शन का एक मात्र महत्वपूर्ण ग्रंथ है 'तत्वार्थाधिगम सूत्र' जैन दर्शन का विकास छठी शताब्दी में हुआ। जैन दर्शन में 24 तीर्थकर हुए है। पहले तीर्थकर ऋषभदेव को माना जाता है। 23 वें तीर्थकर पार्श्वनाथ एवं 24 वें तीर्थकर के रूप में महावीर स्वामी की गणना की जाती है।

4. नीति

''जीवन को सहज, प्रभावशाली, सुखद, निरापद एवं समग्रता के साथ जीने के लिए जो अनिवार्य एवं कल्याणप्रद सिद्धान्त है, उन्हें ही **''नीति''** कहते है।''

नीतिशास्त्र :– जो व्यावहारिक आधार प्रस्तुत किए है, वे ही नीतिशास्त्र के महत्वपूर्ण अंग है। मनुष्य और अन्य प्राणियों में यह अन्तर है कि मनुष्य के कार्य सोच विचार के परिणाम होते है और पशुओ द्वारा जो कुछ किया जाता है, वह संवेगात्मक होता है। नीतिशास्त्र के आधार प्राचीन भारतीय वेद, उपनिषद, आरण्यक, सूत्र, स्मृतियाँ, पुराण, महाकाव्य एवं लोक प्रचलित सूक्तियाँ है। महाभारत और रामायण तो नीतियों का महासमुद्र है। शुक्रनीति, विदुरनीति, पंचतंत्र और नीतिशतक जैसे ग्रंथ भारतीय साहित्य के मेरूदण्ड है। मौर्य काल के आचार्य विष्णुगुप्त बनाम चाण्क्य बनाम कौटिल्य को नीतिशास्त्र का सुमेरू माना जाता है। अर्थ, राजनीति, धर्म और समाज का आधार बनाकर उन्होंने जिस नीतिशास्त्र का प्रणयन किया, वह आज भी प्रासंगिक है।

नीति और धर्म–
नीतियों का संबंध उपदेश से है और धर्म का आदेश से। नीतियाँ धर्म की व्याख्या है। नीतियाँ हमें बताती है कि धर्म को कैसे ग्राह्ा किया जाय और अधर्म से कैसे दूर हुआ जा सके। नीतियाँ धर्म का आधार है और क्रियान्वयन की पद्धतियाँ भी। धर्म अगर प्राण है तो नीतियाँ चेतना है। नीतियाँ धर्म की आँखे है जो प्रत्यक्ष होकर हमें गतव्य तक पहुँचाने का उपक्रम करती है। 'नीति' में निपुणता एवं धर्म में परायणता का भाव छिपा होता है।

नीति और दर्शन–
दर्शन की सूक्ष्मता का स्थूल एवं व्यावहारिक धरातल 'नीति' है। गंभीर से गंभीर दार्शनिक मान्यताओं को सामाजिक, वैयक्तिक एवं आर्थिक राजनीतिक आधार देने का कार्य नीतियाँ ही करती है। दर्शन चिन्तन की समग्रता को प्रतिबिम्बित करता है। नीतियाँ उसमें यथार्थ निदर्शन की भूमिका प्रस्तुत करती है। दर्शन एककालिक होता है नीतियाँ सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक होती है। दर्शन में दुरूहता हाती है, नीतियाँ में सरलता। दर्शन का एक वाद दूसरे को स्वीकार्य नहीं हो सकता नीतियॉ सबको स्वीकार्य होती है।

नीति और समाज–
'व्यक्ति' स्वयं में कुछ भी नही है उसे समाज का हिस्सा बनने के लिए कुछ नीतियों, कुछ नैतिक नियमों का पालन करना आवश्यक होता है। व्यक्ति का सामाजिक विकास नीतियों पर निर्भर है। राज्य की नीतियों, अर्थनीतियों धर्मनीतियों के माध्यम से व्यक्ति का शारिरिक, मानसिक उत्कर्ष संभव होता है। व्यक्ति से समाज बनने के क्रम में 'नीतियों' का महत्वपूर्ण योगदान है। नीति और समाज एक दूसरे के पूरक है।

नीति और राजनीति–
प्राचीन भारत में राजनीति की जगह 'नीति' शब्द का ही प्रयोग होता था। विभिन्न प्राचीन ग्रंथों में 'राजनीति' शब्द नीति का ही प्रयोग होता था। उस समय राजनीति विज्ञान के लिए 'नीतिशास्त्र' शब्द ही था। धर्म और नैतिकता का मुख्य आधार होने के कारण सामाजिक, आर्थिक नियमों को नीतिशास्त्र के अन्तर्गत ही स्वीकार किया जाता था।
राजनीति को नीति का पूरक भी कहा जा सकता है और विकास भी। नीति के अन्तर्गत राजनीतिक विचारों एवं उनकी सीमाएँ समाहित है।

नीति और अर्थ–
अर्थशास्त्र के प्रणेता चाणक्य ने 'अर्थ' शब्द का वृहद् आशय ग्रहण किया है। उन्हीं के शब्दों में ''अर्थ मानव जनसंख्या'' कौटिल्य के अनुसार धरती पर जो कुछ भी है, वह अर्थ ही है। 'नीति' वह साधन है जिसके जरिये अर्थ को प्राप्त किया जा सकता है। नीतियों को पाँच रूपों में नियोजित किया गया है।

1. राजनीति 2. विदेशनीति 3. सैन्यनीति 4. गुप्तचरनीति 5. आयकरनीति

नीति और विज्ञान–
नीति और विज्ञान–दोनों पृथक–पृथक दिखाई देते हैं लेकिन दोनो में गहरा संबंध है। विज्ञान का उद्देश्य जिस प्रकार व्यक्ति के सामाजिक जीवन में सुधार, समरसता एवं सुविधाएँ बदलाव एवं परिष्कार दोनो समान लक्ष्य है। नीतियों का वर्गीकरण, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृति, आर्थिक, राजनीतिक आदि आधारों पर किया जा सकता है।

5. साहित्य
साहित्य से आशय –
साहित्य अपने समय का प्रतिबिम्ब होता हैं। **''हितने सहितम्, सहितम्, साहितस्य भावः साहित्यम्''** इस विग्रह के अनुसार साहित्य का शाब्दिक अर्थ हैं 'जिसमें हित की भावना सन्निहित हो।' अपने हित–अहित का ज्ञान तो पशु–पक्षियों को भी होता है, जैसा कि 'गोस्वामी तुलसीदास' स्वीकार करते हैं, **'हित अनहित पशु पक्षिहुं जाना।'** फिर इससे तो मानव एक बुद्धि–जीवी प्राणी ठहरा। उसे तो यह ज्ञान अवश्य होना चाहिए। मनुष्य की भाँति साहित्य भी हित–चिन्तन करता हैं, परन्तु मनुष्य और साहित्य के हित–चिन्तन में अवनि और अम्बर का अन्तर है। साधारणतया मनुष्य का हित–चिन्तन संकुचित 'स्व' पर आधारित रहता है। उसकी सीमित दृष्टि केवल अपना ही चक्कर लगाकर लौट आती हैं, परन्तु साहित्य का हित–चिन्तन विश्वात्मैक्य और विश्व–कल्याण की भावना पर आधारित होता है। एक व्यक्तिगत हित–चिन्तन हैं, दूसरा समष्टिगत। अतः जिस ग्रन्थ में समष्टिगत हित–चिन्तन प्राप्त होता हैं, वही साहित्य है। इसलिये विद्वानों ने 'ज्ञान–राशि' के संचित कोष का नाम **'साहित्य'** कहा है। प्रत्येक युग का श्रेष्ठ साहित्य अपने युग के प्रगतिशील विचारों द्वारा किसी न किसी रूप में अवश्य प्रभावित होता है।

साहित्य हमारी कौतूहल और जिज्ञासा वृत्तियों को शान्त करता हैं, ज्ञान की पिपासा को तृप्त करता हैं और मस्तिष्क की क्षुधापूर्ति करता है। जठरानल से उद्विग्न मानव जैसे अन्न के एक–एक कण के लिये लालायित रहता हैं, उसी प्रकार मस्तिष्क भी क्षुधाग्रस्त होता हैं, उसका भोजन हम साहित्य से प्राप्त करते हैं। केवल साहित्य के ही द्वारा हम अपने राष्ट्रीय इतिहास, देश की गौरव गरिमा, संस्कृति और सभ्यता, पूर्वजों के अनुभूत विचारों एवं अनुसंधानों, प्राचीन रीति–रिवाजों, रहन–सहन और परम्पराओं से परिचय प्राप्त करते है।

संस्कृत में निम्नलिखित को साहित्य के अंतर्गत शामिल किया जाता हैं –

1. वैदिक साहित्य
2. वेदांग साहित्य
3. पुराण और इतिहास
4. धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र और कामशास्त्र
5. दर्शन
6. संस्कृत का बौद्ध और जैन विवेचनात्मक ग्रंथ
7. आयुर्वेद एवं अन्य उपवेद
8. अलंकृत काव्य, गद्य नाटक, चंपू और कहानियाँ
9. नाटक और काव्य के विवेचनात्मक ग्रंथ
10. संकीर्ण काव्य, धर्म और दर्शन की टीकाएं
11. निबंध
12. तंत्र–ग्रंथ और भक्ति साहित्य
13. पत्थरों और ताम्रपत्रों का साहित्य

हिन्दी साहित्य –

सन् 1000 ई. के आसपास हिन्दी साहित्य प्रारंभ होता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास को काल एवं प्रवृत्ति के आधार पर चार भागों में विभक्त किया हैं –

1. आदिकाल अथवा वीरगाथा काल (संवत् 1050–1375 ई. तक)
2. पूर्व मध्य काल या भक्ति काल (संवत् 1375–1700 ई. तक)
3. उत्तर मध्यकाल या रीतिकाल (संवत् 1700–1900 ई. तक)
4. आधुनिक काल अथवा गद्यकाल (संवत् 1900 ई. से अब तक)

1. आदिकाल अथवा वीरगाथा काल ;संवत् 1050–1375 ई. तकद्ध

आदिकाल अथवा वीरगाथा काल में हिन्दी, अपभ्रंश, प्राकृत मिश्रित काव्य रचनाएँ लिखी गई। आदिकालीन उपलब्ध साहित्य को भाषिक दृष्टि से पाँच वर्गों में विभक्त किया गया हैं –

1. अपभ्रंश साहित्य
2. डिंगल साहित्य
3. पिंगल साहित्य
4. लोक भाषा काव्य
5. आदिकालीन अन्य साहित्य

2. पूर्व मध्य काल या भक्ति काल ;संवत् 1375–1700 ई. तकद्ध

भक्ति काल के साहित्य की मुख्य प्रवृत्ति भक्ति है। भक्तिकाल को दो धाराओं में बांटा गया हैं –

1. निर्गुण भक्ति धारा 2. सगुण भक्ति धारा

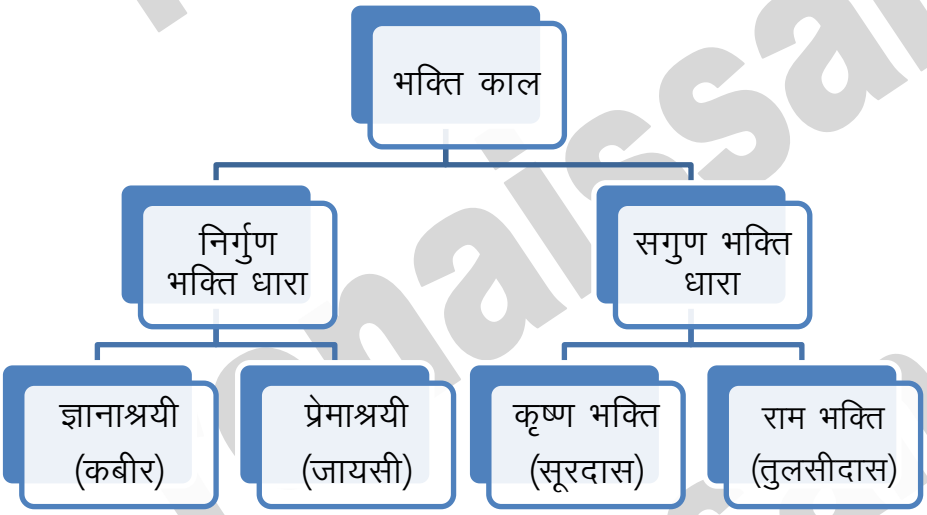

3. उत्तर मध्यकाल या रीतिकाल (संवत् 1700–1900 ई. तक)

'रीति' का अर्थ हैं परम्परा अथवा पूर्व की काव्य मान्यताओं को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करना।

रीतिकाल को तीन भागों में विभक्त किया गया हैं –

1. रीतिबद्ध काव्य
2. रीतिमुक्त काव्य
3. रीतिसिद्ध काव्य

इस काल में जनमानस का झुकाव भक्ति से हटकर लौकिक श्रृंगार एवं भोग–विलासिता की तरफ हो रहा था। यही कारण हैं कि इस काल की रचनाओं में श्रंगारिकता, मांसलता, नखशिख वर्णन, नायक–नायिका भेद निरूपण की अधिकता परिलक्षित होती है।

4. आधुनिक काल अथवा गद्यकाल (संवत् 1900 ई. से अब तक)

आधुनिक काल को हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु काल, गद्य काल या खड़ी बोली हिन्दी कविता का काल भी कहा जाता है। सन् 1826 ई. में **'उदन्त मार्तण्ड'** नामक हिन्दी साप्ताहिक के प्रकाशन ने हिन्दी गद्य को एक नई नीति दी। आधुनिक काल को निम्नलिखित भागों में बाँटा गया –

1. भारतेन्दु काल (सन् 1850–1900)
2. द्विवेदी युग (सन् 1900–1920)
3. छायावाद (सन् 1920–1935)
4. उत्तर छायावाद

प्रगतिवाद (सन् 1936–1942)

प्रयोगवाद एवं नई कविता (सन् 1943–1960)

समकालीन काव्य साहित्य (सन् 1980 ई. के पश्चात्)

renaissance
renaissance
renaissance

UNIT-IV

1. O CAPTAIN ! MY CAPTAIN !
(Walt Whitman)

SUMMARY

The poet addressing Abraham Lincoln says that the trip has been completed and the ship has come to the shore after facing all problems. The prize (the ending of slavery in the United States) has been won. Now they are near the port and can hear the clamour of the people who are feeling happy. But the Captain of the ship of the country, Abraham Lincoln lies dead on the deck. The poet wants Lincoln ti rise up and hear the bells ringing for him. The poet puts his arm under the head of the Captain but finds it cold and dead. Now the country has come out victorious from the battle against slavery. The country must celebrate this victory but the poet will walk mournfully because the Captain, Abraham Lincoln has died.

renaissance
renaissance
renaissance

2. THE LAST LEAF
(O. Henry)

SUMMARY IN ENGLISH

Sue and Johnsy were two young friends. They both lived in a little district west of Washington Square in old Greenwich village. They were both budding artists. They met in a hotel and soon became friends. That was in May. Since then they lived together. In November pneumonia attacked the little village. It killed many people. Johnsy was also attacked by this deadly enemy. She lay scarcely moving, on her iron bed, looking through the small windowpanes at the blank side of the next brick house. The doctor attending on her was unhappy. He felt that something was disturbing Johnsy which did not make her recover. He asked Sue about her affairs. He said that it seems that. Johnsy has lost her desire to live and thus his medicines have not been able to have an effect on her person. But Sue said that Johnsy was alright and there was no question for her not to desire to live. The doctor left saying that Sue should try to make Johnsy not to think of death.

After the departure of the doctor Sue went to Johnsy. She took her drawing board along. Johnsy lay in her bed scarcely making a movement. Sue began to paint a pen-and-ink drawing on her board. She was drawing a picture for a magazine story. Sue was sketdhing an Idaho cowboy with horseshow riding trousers and monocle. Soon Johnsy made a movement. Sue found her-looking out of the window and counting backward—twelve, eleven, ten, nine, eight and seven. Sue eagerly looked out. There she saw an old ivy tree. Autumn had denuded the tree of its leaves. Sue asked Johnsy as to what she was counting. Johnsy told her that the leaves- of the ivy tree were falling faster now. Three days ago there were almost a hundred. Now there are only five leaves left. And when the last one falls she would also die.

Sue tried to tell Johnsy that the ivy leaves had nothing to do with her getting well. She told Johnsy that the doctor had told her that her chances of getting well were ten to one. She asked Johnsy to take some broth and allow her to go back to her drawing so that she could give it to the editor as promised. The money thus earned would help her to buy port wine for Johnsy and pork chops for herself. Johnsy asked her not to bother about her port wine. She kept her eyes glued to the window. Sue tried to divert her attention from the thoughts of death. Sue asked Johnsy to sleep. She told her that she would call old Behrman to be her model for the painting.
Old Behrman was a painter who lived on the ground floor of the same apartment house in which Sue and Johnsy also lived. He was past sixty but

as an artist he was a failure. He still was hopeful of making his masterpiece though now he did nothing but do some commercial paintings. He earned a little by posing as a model to those young artists who could not pay the price of a professional. He drank gin to excess and still talked of his coming masterpiece. He took special care of Sue and Johnsy.

Sue went to Behrman and told all about the foolishness of Johnsy. They went upstairs and found Johnsy sleeping. Sue pulled the shades of the window and called Behrman to the other room from where he could see the ivy tree whose leaves were falling.

The next morning Johnsy asked Sue to remove the curtain from the window to that she could see how many leaves were still there on the ivy tree. But to her surprise she found one leaf standing out though during the night the weather had been very stormy. Johnsy thought that this was the last leaf and when it falls she would die too. The day wore off but the last leaf hung to the tree. The next day too the last leaf was there. Johnsy lay for a long time looking at it. And then she called Sue, who was preparing chicken broth for her. She told Sue that she was a wicked girl because she thought of death. She asked Sue to give her the broth. After some time she said to Sue, that someday she would paint the Bay of Naples.

The doctor came in the afternoon. He was happy at the progress of Johnsy. Then he told them that he had to see another patient downstairs. It was Old Behrman. The next day the doctor declared Johnsy out of danger. That afternoon Sue told Johnsy that the last leaf she saw hanging on the ivy was painted by Behrman, who, in doing so in wind and rain had suffered terribly. Behrman had painted his masterpiece and saved the life of Johnsy. But he died in the process.

renaissance
renaissance
renaissance